कृष्णा सोबती की कहानियों में विभाजन की पीड़ा

मोहम्मद रहबर

मलिक मो. ज़ुबैर अली

शोधार्थी, हिन्दी विभाग,

अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ़

शोध–सार

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी खासकर नयी कहानी के दौर में जिन लेखिकाओं ने अपनी रचनात्मक क्षमता से पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है । उनमें कृष्णा सोबती का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है । सोबती जी का रचना संसार काफी व्यापक है । उन्होंने हिन्दी साहित्य की लगभग सभी विधाओं पर लिखा । सोबती जी का एक मात्र कहानी–संग्रह 'बदलो के घेरे' है । इस संग्रह की कहानियां में तीन पक्षों को देखा जा सकता है । प्रथम स्त्री–पुरुष प्रेम संबंधी, द्वितीय स्त्री की पीड़ा और तृतीय विभाजन की समस्या को देखा जा सकता है ।

इस संग्रह की तीन कहानियां भारत–पाक विभाजन की त्रासदी और पीड़ा से संबंधित हैं । भारत–पाक विभाजन की त्रासदी और साम्प्रदायिक राजनीति के चलते किस तरह मानवीय संवेदनाओ का ह्रास तथा मूल्यहीनता को इन कहानियों में देखा जा सकता है । इन तीनों कहानियों में समुदाय विशेष के प्रति भय डर तथा अपने ही देश में परायेपन की स्थिति और वर्षों से साथ रह रहे लोगों के आचार विचार में परिवर्तन को देखा जा सकता है । साम्प्रदायिकता से उपजी मार काट, आगजनी और विस्थापन के कारण समुदाय विशेष के लोगों की शारीरिक और मानसिक पीड़ा को भी देखा जा सकता है ।

प्रस्तुत लेख में कृष्णा सोबती की तीनों कहानियों 'सिक्का बदल गया', ' डरो मत मै तुम्हारी रक्षा करूँगा' और 'मेरी माँ कहां' के माध्यम से विभाजन की त्रासदी के दर्द, पीड़ा को देखने का प्रयास किया गया है ।

कुंजी शब्द– विभाजन, त्रासदी, साम्प्रदायिकता, पीड़ा, भारत–पाक, विस्थापन आदि ।

कृष्णा सोबती का जन्म 18 फरवरी 1925 ई. को पूर्वी पंजाब (अब पाकिस्तान) के गुजरात में हुआ था । इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गुजरात में ही हुई । जब देश का विभाजन हुआ तब वे फतेहचंद कॉलेज लाहौर की छात्रा थी । कृष्णा सोबती का परिवार विभाजन की त्रासदी से गुज़रा और जन्मभूमि छोड़कर दिल्ली में रहने लगा ।

कृष्णा सोबती की कहानियों में स्त्री की आत्म सजगता, परम्परागत समाज में उसकी घुटन एवं उससे बाहर निकलने की छटपटाहट प्रमाणिकता के साथ अभिव्यक्त हुई है ।

कृष्णा सोबती की कहानियाँ 'बादलों के घेरे' संग्रह में संकलित हैं । कृष्णा सोबती के इस संग्रह की कहानियों में तीन तरह की प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं । एक तो प्रेम और स्त्री पुरुष संबंधों की कहानियाँ हैं जो नई कहानी की एक विशेष प्रवृत्ति है । दूसरे वर्ग की कहानियों में उन्होंने स्त्री की यातना और पीड़ा को सामाजिक संदर्भों में चित्रित करने का प्रयास किया है ।

कृष्णा सोबती की कहानियों का तीसरा वर्ग देश विभाजन और साम्प्रदायिकता से सम्बन्धित यातना और विडम्बनाओं का चित्रण है । 'सिक्का बदल गया' इसी तरह की कहानी है जहाँ मानवीय प्रेम के लुप्त हो जाने के बावजूद सदभाव का एक संदेश निहित है ।

विभाजन यह केवल एक शब्द नहीं बल्कि एक भाव बन गया है–दर्द का, पीड़ा का विभाजन उस तूफान का नाम है जिसने लाखों लोगों को उनके ठिकानों से उखाड़ फेंका । भारत और पाकिस्तान के असंख्य लोगों के मन–मस्तिष्क पर इसकी अमिट छाप पड़ चुकी है । जो आज तक बरकरार है । "सम्प्रदाय शब्द बहुधा धर्म के साथ जुड़कर आता है । संप्रदाय का संबंध और आधार धर्म में ही केन्द्रित होता है परंतु जब इसमें राजनीति का प्रवेश होता है तो राष्ट्र, समाज पर उसका दुष्प्रभाव पड़ने लगता है और धर्म की आड़ लेकर स्वार्थ लोलुप लोग उथल–पुथल मचाने लगते हैं । धर्म की ऐसी ही सीमित और खण्डित विचारधारा सांप्रदायिकता कहलाती है ।"[i]

भारत विभाजन वह घटना है जिसकी पीड़ा से लोग आज तक नहीं उबर पाए हैं । यही कारण है कि अनेक साहित्यकारों जैसे–यशपाल, मंटो, भीष्म साहनी, अमृता प्रीतम, मोहन राकेश, कमलेश्वर, राही मासूम रज़ा आदि के सृजन में उस दर्द को देखा जा सकता है । जो बंटवारे के फलस्वरूप उपजा। भारत–पाकिस्तान विभाजन भारत इतिहास की त्रासदियों में से एक है । यह एक राजनीतिक ध्वंस से अधिक मानसिक ध्वंस के रूप में हिंदी कथा साहित्य में उजागर हुआ है । यह हिंदी साहित्य के अतिरिक्त भारतीय भाषाओं में विशेषकर उर्दू, सिंधी, पंजाबी के लेखकों ने भी इस त्रासदी को अपने साहित्य में स्थान दिया है । उर्दू में सआदत हसन मंटो और राजेन्द्र सिंह बेदी ने क्रमशः 'खोल दो', टोबाटेक सिंह और लाजवंती पंजाबी में कुलवंत सिंह विर्क की 'घास' तथा लोचन बख्श की 'धूल तेरे चरणों की' रचना की तो वहीं सिंधी भाषी मोतीलाल जोतवाणी और गुलज़ार अहमद ने क्रमशः 'धरती से नाता' और 'यादें' कहानी लिखी । हिंदी लेखकों ने विभाजन में टूटते नैतिक मूल्यों और मानवीय संवेदना के धरातल पर अपनी कहानियाँ लिखी । विभाजन की पीड़ा का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि एक लेखक विभाजन पर कई कहानियाँ लिख कर भी अपने मन की पीड़ा को कम न कर सका । कथाकारों की बेचैनी (पीड़ा) इतनी बढ़ी कि उन्होंने अब उपन्यास का भी सहारा लिया ।

कृष्णा सोबती के अतिरिक्त अज्ञेय ने शरणदाता, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने 'खुदाराम', विष्णुप्रभाकर ने 'तांगेवाला', उपेन्द्रनाथ अश्क ने 'चारा काटने की मशीन', अमृतलाल नागर ने 'आदमी जाना अनजाना', मोहन राकेश ने 'मलबे का मालिक', भीष्म साहनी ने 'अमृतसर आ गया है', बदीउज़्ज़मा ने 'अंतिम इच्छा', स्वदेश दीपक ने 'रिफ़्यूजी', नासिरा शर्मा ने 'सरहद के इस पार' आदि कहानियों में विभाजन की त्रासदी को दिखाया गया है ।

भारत–पाकिस्तान विभाजन भारत की सबसे विनाशकारी त्रासदी है । यह कहा जा सकता है कि क्रांति की प्रतिक्रया मे जो अंग्रेजों ने क्रूरतापूर्वक व्यवहार और ज़्यादती हमारे स्वतंत्रता सेनानियों और भारतवासियों के साथ की थी उससे भी भयानक नरसंहार जैसी घटनाएँ घटी ।

कृष्णा सोबती उन साहित्यकारों में से एक हैं जिन्होंने विभाजन की समस्या को न सिर्फ देखा अपितु स्वयं भोगा भी है इस संबंध में एक साक्षात्कार में सोबती जी कहती हैं "सिर्फ मैं ही नहीं स्वतंत्रता प्रप्ति और विभाजन के ऐन बीचोबीच से होकर निकली पीढ़िया भी जो आज तक दशकों–दशक लम्बा सफर तय कर चुकी हैं वह न उस त्रासदी को भूली हैं और न ही विभाजन से जुडे देश के स्वाधीनता पर्व, को विभाजन को भूलना भी मुश्किल और उसे याद करते चले जाना भी खतरनाक लाखों लाख लोग जड़ो से कट गए कुनबे के पुराने छायादार पेड़ उखड कर ठंडे हो गए । इतिहास और भूगोल बदल गए । ऐसे में अपने को जीवित पाकर ही विस्थापित की इस त्रासदी से ऊबर कर खडे हो जाने की कोशिश कम महत्वपूर्ण नही थी । व्यक्तिगत आतंक, पीड़ा, जख्म सब हकीकत को चुनौती दे रहे थे । अपने–अपने ढंग से दोनों ओर से समय का आख्यान प्रस्तुत किया गया।"[i] [i]

उसी भोगे हुए विभाजन की समस्याओं को यथार्थ रूप में अपने कथा साहित्य में चित्रित किया है जिनमें 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान तक' में विशेष रूप से साम्प्रदायिकता को दिखाया गया है कृष्णा सोबती के एकमात्र कहानी संग्रह

'बादलो के घेरे', में संकलित 'सिक्का बदल गया', 'मेरी माँ कहाँ', 'डरो मत मैं तुम्हारी रक्षा करूगाँ' आदि कहानियों में विभाजन की पीड़ा, साम्प्रदायिकता एवं विस्थापन इत्यादि को बड़े ही मार्मिक रूप से दिखाया गया है ।

'सिक्का बदल गया' कहानी में शाहनी की मनः स्थिति के माध्यम से पाकिस्तान में वर्षों से रह रहे एक समृद्ध परिवार के उस दर्द को बयां करता है जो सत्ता परिवर्तन (विभाजन) के बाद होने वाले एक साथ रह रहे लोगों के मन में आए बदलाव का भी रेखांकन करता है । शाहनी की ये असमंजसता एक द्वन्द्व की स्थिति को उद्घाटित करती है ।

वर्षों से एक साथ रह रहे लोगों के मन में अनेक प्रश्न कौंधने लगते हैं जिससे उनका मन विचलित हो जाता है । एकाएक शाहनी अपने ही समाज, अपने ही घर, अपने ही देश में पराई हो गई है । वे लोग जो कई वर्षों से अपनी संस्कृति और परंपरा को एक साथ निभाते आए थे, एक राजनीतिक दाव के चलते अलग हो गए । यहाँ विभाजन सिर्फ भूमि का ही नहीं अपितु साथ रह रहे लोगों के मानवीय मूल्यों का भी हुआ है । जैसे कि दाऊद खां, शेरा, मुल्ला इस्माईल, बेगू पटवारी आदि पात्र जो शाहनी परिवार पर आश्रित थे विभाजन के फलस्वरूप अब वे एक दूसरे से अनजान हो गए हैं । 'सिक्का बदल गया' कहानी में शाहनी ट्रक की आवाज सुनकर अपनी हवेली से विस्थापन को सोचकर ही दर्द से कराह उठती हैं तभी वहाँ इंस्पेक्टर दाऊद आता है और शाहनी से अपने साथ कैंप में चलने को कहता है ।

शाहनी का कमजोर शरीर लड़खड़ा गया और वह अपनी स्मृतियों में खो गई। "शाहनी के कदम डोल गए, चक्कर आया और दीवार के साथ लग गई इसी दिन के लिए छोड़ गये थे शाहजी उसे? बेजान सी शाहनी की ओर देखकर बेगू सोच रहा है क्या गुजर रही है शाहनी पर। मगर क्या हो सकता सिक्का बदल गया है....।"[iiii] जो गाँव शाहजी और शाहनी के इशारों पर चलता था उन सभी के परिवारों के फैसले शाहनी की चैखट पर ही हुआ करते थे और उन्हीं का फैसला सर्वमान्य माने जाते थे । आज शाहनी विभाजन के चलते उन्हीं गाँव वालों के बीच अनजान, पराई, एवं असहाय दिखाई देती हैं । शाहजी की मृत्यु के पश्चात उसी गाँव के लोग शाहनी की संपत्ति को न केवल लूटना चाहते हैं अपितु उनकी हत्या का भी षडयंत्र रचते हैं । शाहनी को आभास होते हुए भी वह उन लोगो के सामने अनभिज्ञ बनी रहती है और अपनी पीड़ा को अपने हृदय में कचोट कर रह जाती है और अपने भावों और विचारों को किसी के सम्मुख व्यक्त नहीं करती हैं ।

शाहनी की इस पीड़ा को लेखिका इस तरह व्यक्त करती हैं–"शाहनी का घर से निकलना छोटी सी बात नहीं। गाँव का गाँव खड़ा है हवेली के दरवाजे से लेकर उस द्वारे तक जिसे शाहजी ने अपने पुत्र की शादी में बनवा दिया था । गाँव के सब फैसले सब मशविरे यहीं होते रहे हैं । इस बड़ी हवेली को लूट लेने की बात भी यहीं सोची गई थी । यह नहीं कि शाहनी कुछ न जानती हो। वह जानकर भी अनजान बनी रही। उसने कभी बैर नहीं किया। लेकिन बढ़ी शाहनी यह नहीं जानती कि सिक्का बदल गया है ।"[iv] लम्बे संघर्षों के बाद देश को अंग्रेज़ों से स्वतंत्रता प्राप्त हुई लेकिन अपने ही देश के स्वार्थ लोलुप राजनीतिज्ञों तथा स्वार्थपरक लोगों ने अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए जनमानस की भावनाओं को ध्यान न रखते हुए हिन्दु–मुसलमान में विभाजित कर दिया । दोनों धर्मों के लोगों को विभाजन के उपरांत उपजी विस्थापन, मानवीय मूल्यों का ह्रास और आपसी विश्वास का अभाव जैसी पीड़ादायक समस्याओं को झेलना पड़ा ।

कृष्णा सोबती ने अपनी दूसरी कहानी मेरी माँ कहाँ में 1947 के दंगे और उससे उपजी सांम्प्रदायिकता ने मानवीय मूल्यों को छिन्न–भिन्न कर दिया था । इस कहानी में सोबती जी ने विभाजन के समय होने वाले दंगों, मारकाट, आगजनी इत्यादि जघन्नीय घटनाओं को दिखाया है । इस त्रासदी ने केवल मनुष्यों के शरीरों को नहीं छलनी किया बल्कि उनकी आत्माओं एवं विश्वासों को भी छलनी कर दिया जिसके परिणामस्वरूप इसने न केवल हिन्दुस्तान की गंगा–जमुनी तहज़ीब को क्षतिग्रस्त किया बल्कि मानवीय संबंधों और विश्वासों में हिंदू–मुस्लिम की ऐसी लकीर खींच दी, जो शायद कभी आपस में एक हो पाए। धर्म के नाम

पर दोनों सम्प्रदाय के लोगो ने न केवल मानवीय संवेदनाओं को ताक पर रखा अपितु एक दूसरे की निर्मम हत्याएँ की जिससे एक भीषण साम्प्रदायिक वातावरण तैयार हो गया, तथा हज़ारों लोग मौत के घाट उतारे गए बस्तियाँ धू–धू जलकर साम्प्रदायिकता की चपेट में खाक हो गई । कृष्णा सोबती सांप्रदायिक की आग से उपजी आगजनी और भीषण पीड़ा के पीछे किसी समुदाये विशेष को ज़िम्मेदार ठहराया जाना और उससे अपराधी घोषित करने को किसी भी रूप में स्वीकार नहीं करती और 'सोबती वैद संवाद' पुस्तक में कहती हैं कि "विभाजन जैसी ऐतिहासिक घटनाएँ जो संघर्ष के बाद किसी एक देश के विभाजन और नए देश के जन्म का कारण भी बनी हों, उनके राजनैतिक और सामाजिक विश्लेषण के बिना ही इकतरफा दोषारोपण करना भोलापन ही होगा । यह कहना कि यह दल अथवा वह दल, समुदाय, जाति, संप्रदाय ऐसा करने का गुनाहगार है । हिंसा, नरसंहार, आगजनी, मारकाट और राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं में से लुप्त होते हुए सिर्फ एक समुदाय विशेष को अपराधी करार देना न राजनैतिक विश्लेषण होगा और ना ही साहित्यिक अथवा ऐतिहासिक।"[v]

कृष्णा सोबती ऐसी कथाकार हैं, जिनका विभाजन की विभीषिका से सीधा सामना हुआ। देश विभाजन के बाद सबसे अधिक कष्ट शरणार्थियों को झेलना पड़ा । शरणार्थी शिविरों का जीवन बड़ा ही कष्टपूर्ण और दर्द–भरा था । इस नारकीय जीवन की उन्होंने कल्पना तक नहीं की थी । ये सभी शरणार्थी दूसरे के द्वारा बचाए जा रहे इतिहास के शिकार थे । कई लोग अपने वतन में नहीं लौट पाए थे और अपने परिवार से बिछुड़ गये थे । सोबती ने विभाजन, सांप्रदायिकता, शरणार्थी–जीवन और भ्रष्टाचार के दृश्य अपनी आँखों के सामने देखे थे ।

विभाजन की त्रासदी एवं उससे उत्पन्न घटनाओं के संबंध में नरेन्द्र मोहन जी का विचार है–"लोग युद्धों में मरते हैं राजकीय प्रकोप के शिकार होते हैं, लेकिन सदियों से एक साथ रहते आए–एक सांस्कृतिक विरासत के लोग एक दूसरे के प्रति इतनी घृणा और नफरत प्रकट कर सकते हैं हत्या करने के लिए इतने जघन्य और क्रूरतम तरीके व्यवहार में ला सकते हैं ऐसा शायद किसी ने नहीं सोचा था । भारत विभाजन इस महाद्वीप के जीवन की सबसे भयंकर त्रासदी है । इसके अप्रत्याशित आघात ने सदियों से अर्जित संस्कृति, जातीयता, भाषा और प्रकृति तथा मानवीय संबंधों को एक झटके से नष्ट कर दिया ।"[vi] इसी प्रकार की भारत–पाक विभाजन से उपजी मारकाट, साम्प्रदायिकता को सोबती जी ने अपनी कहानी 'मेरी माँ कहाँ'मे दिखाया है कि वहाँ का वातावरण धर्म के नाम पर फैली हिंसा, सांप्रदयिकता और आगजनी में परिवर्तित हो गया है । "क्या लंबी सड़क पर खड़े–खड़े यूनुस खाँ दूर–दूर गाँव में आग की लपटे देख रहा है । चीखो की आवाज़ उसके लिए नई नहीं । आग लगने पर चिल्लाने में कोई नयापन नहीं । उसने आग देखी है । आग में जलते बच्चे देखे हैं औरतें और मर्द देखें हैं । रात–रात भर जलकर सुबह खाक हो गए मुहल्लों में जले लोग देखे हैं । वह देखकर घबराता थोड़े ही है? घबराए क्या? आज़ादी बिना खून के नहीं मिलती, क्रांति बिना खून के नहीं आती और इसी क्रांति से तो उसका नन्हा सा मुल्क पैदा हुआ है ।"[vii] विभाजन के फलस्वरूप उपजी समस्याएं अत्यंत गंभीर हो चुकी थी दोनों सम्प्रदायों के लोगों के बीच विश्वास नाम की कोई चीज नहीं बची थी । प्रत्येक दिशा में फैला साम्प्रदायिकता का सन्नाटा और दंगे की भेंट चढ़ी लाखों निर्दोष लोगों की लाशे ही लाशे दिखाई दे रही थीं । इस भीषण स्थिति में एक दूसरे के प्रति विश्वास का क्षरण हो चुका था । जिसको इस कहानी में सांम्प्रदायिकता की भेंट से बची एक बच्ची के माध्यम से देखा जा सकता है । यूनुस खाँ और उसके साथियों द्वारा भारी मारकाट करते हुए बच्ची के परिजनों को भी मौत के घाट उतार देते है । यद्यपि युनूस खाँ बच्ची के प्रति स्नेह प्रकट करता है किंतु बच्ची के मन में यूनुस के प्रति किए गए स्नेह का कोई मोल नहीं था बल्कि उसके हृदय में एक संम्प्रदाय विशेष के प्रति घृणा, भय, क्रोध था । उसके हृदय में उसके परिजनों की हत्या की स्मृतियाँ कौंधने लगती हैं । स्वयं को वह यूनुस खाँ के पास असुरक्षित महसूस करती है । इस पूरी भावपूर्ण मनोदशा का वर्णन सोबती जी ने इस प्रकार किया है– "यूनुस खाँ बच्ची का सिर सहलाता है, बच्ची काँप जाती है । उसे लगता है कि हाथ गला दबोच देंगे । बच्ची

सहमकर पलकें मूँद लेती है। कुछ समझ नहीं पाती कहाँ है वह? बलोची? वह भयानक रात। और उसका भाई। एक झटके के साथ उसे याद आता है कि भाई की गर्दन गंड़ासे से दूर जा पड़ी थी.....नही लड़की खान की छाती पर मुटिठयाँ मारने लगी, 'तुम मुसलमान हो–तुम'.....एकाएक लड़की नफरत से चीखने लगी मेरी माँ कहाँ है। मेरे भाई कहाँ है। मेरी बहन कहाँ।"[viii]

निष्कर्ष

इस तरह देखें तो सोबती जी ने विभाजन की समस्याओं को अपने उपन्यासों एवं आख्यायिकाओं में रेखांकित किया है। यद्यपि उनकी कहानियों की बात की जाए तो उनकी कहानियों में 'सिक्का बदल गया', 'मेरी माँ कहाँ', और 'डरो मत मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा' में भारत–पाक विभाजन की त्रासदी से उपजी साम्प्रदायिक समस्या, विस्थापन, आपसी अलगाव के दर्द को महसूस किया जा सकता है।

ये सभी घटनाएँ ऐसी प्रतीत होती है जैसे कि स्वयं हमारे सामने घटित हो रही हों। निःसन्देह ये कहा जा सकता है कि सोबती जी ने इन सब घटनाओं को न केवल देखा बल्कि भोगा भी है। कृष्णा सोबती जी की ये प्रमुख कहानियाँ विभाजन की पीड़ा, दर्द एवं साम्प्रदायिकता को एक जीवंत दस्तावेज़ के रूप में प्रस्तुत करती हैं।

संदर्भ :–

[i] दसवें दशक के हिंदी उपन्यासों में साम्प्रदायिक सौहार्द, प्रो. मंजुला राणा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2008, पृ.–70

[ii] bbchindi.com शुक्रवार, 17 नवम्बर 2006.

[iii] सिक्का बदल गया, (बादलों के घेरे, कहानी संग्रह), कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2007, पृ.–138

[iv] वही, पृ.–138

[v] https://abhivyakti.life/2020/12/13

[vi] सिक्का बदल गया, नरेन्द्र मोहन (संपादक), सीमांत पब्लिकेशन, 1975, पृ. 11

[vii] मेरी माँ कहाँ, (बादलों के घेरे, कहानी संग्रह), कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2007, पृ.–187

[viii] वही, पृ.–189–190